भारतीय सस्कृति से विमुख

बॉलीवुड

हमारी फिल्मी दुनियाँ 'बॉलीवुड' कब परिपक्व होगी, समझ में नही आता हैं । कब तक बचकाने विषयों पर फिल्में बनती रहेगी ? समझ नही आता हैं । अभी-अभी तो खोया-पाया 'लॉस्ट एण्ड फाउण्ड' वाले फार्मूले से जान छुटी हैं, ईश्वर फिल्मवालों को और सदबुध्दी दे । बच्चों का बिछड़ना, अंत में मिलना । परिवार का बिछड़ना और अंत में मिलना देखदेखकर कोफ्त होने लगी थी । फिर जैसे तैसे निर्माता निर्देशकों को समझ आने लगा कि बहुत होने लगा हैं । लोग फिल्म की शुरुआत में ही समझ जाते थे कि अब कोई बिछड़ेगा जो अंत में आकर अपनों से मिलेगा । और इस तरह खोया-पाया 'लॉस्ट एण्ड फाउण्ड' वाले फार्मूले से जान छुटी ।

इसके बाद फिल्म वाले दुखी प्रेमियों के पीछे पड़ गये । हर फिल्म में नायक-नायिका में पहले प्रेम हो जाता हैं और फिर अचानक जात-बिरादरी, भाई-बन्धु, माँ-बाप और नही तो क्रूर खलनायक ही दोनो प्रेमियों को जुदा करने के पीछे पड़ा रहता था । फिल्म देखने वाले प्रेम में बिछड़े नायक-नायिका के लिये प्रार्थना करते थे कि ईश्वर इन दोनो को मिला दे । परन्तु जल्दी ही फिल्म देखने वालों का ये भ्रम टूट गया और वो समझ गये कि वे लोग प्रार्थना करें याँ ना करें ये बिछड़े प्रेमी तो अंत में मिलने ही हैं । लेकिन फिल्म वालों की कुम्भकरणीय गफलत की दाद देनी पड़ेगी कि उन लोगों ने अपने लिये ये भ्रम बनाये रखा कि प्रेम कहानी जैसा कोई विषय ही नही हैं । और वे लोग हाथ धोकर इस विषय के पीछे पड़े रहे यंहा तक कि पुरानी हिट फिल्मों की रीमेक बनाने लगे और आखिर उनका अपना मन जब इससे भर गया तो वे लोग अपने आपको चैम्पियन फिल्मकार कहलवाकर इससे किनारा कर गये ।

चैम्पियन तो बनना ही था, आखिर प्रेम की ये कबड्डी हमारे फिल्मकार ही अपनी फिल्मों में दिखा सकते हैं । किसी और जगह एसी कबड्डी होती ही नही हैं, जब एक ही देश किसी खेल का माहिर हो जाये और वो खेल उसी देश में ही खेला जाता हो तो उसका चैम्पियन बनना तो तय हैं । वैसे भी किसी और देश की इस कबड्डी में दिलचस्पी नही हैं ।

इन सबसे बोर होकर हमारे दर्शक विदेशी फिल्मों को बड़े चाव से देखने लगे । दर्शक बड़ी हैरानी से विदेशी फिल्मो में देखते थे कि वंहा के निर्माता निर्देशक कितने देशप्रेमी हैं, कितने प्रतिभाशाली हैं और अपनी संस्कृति को मनोरंजक ढंग से दिखाने का उनके पास क्या गजब का मस्तिष्क हैं । विषयों की उनके पास कभी कमी नही दिखी, रचनात्मकता उनके अंदर कूटकूटकर भरी होती हैं । कमाल ये होता हैं कि ये सब वे लोग दर्शको की पंसद-नापंसद को ध्यान में रखकर करते हैं । इससे सिध्द होता हैं कि वे दर्शको की नब्ज को कितना पहचानते हैं ।

हमारे यंहा के निर्माता निर्देशक, दर्शको की पंसद नापंसद को भाड़ में झोकतें हैं और भेड़चाल के अतंर्गत उसी विषय पर फिल्में बनाते हैं जो पहले हिट हो चुकी हैं । इसका ताजा उदाहरण 'शाहरुख खान' की हिट फिल्म 'चक दे इंडिया' हैं । जिसमें टीम भावना को उजागर किया गया हैं । बस फिल्म का हिट होना था कि इसी विषय पर माधुरी दीक्षित की 'आजा नच ले' बन गई और एक 'गोल' नामक फिल्म बन गई । दोनो ही फिल्में सुपर फ्लाप साबित हुई । इसी के चलते जब उन्हौने देखा कि हमारे दर्शक विदेशी फिल्मों को बड़े चाव से देख रहे हैं तो आनन फानन उन्हौने विदेशी फिल्मों की रीमेक बनानी आरंभ कर दी परन्तु पराकाष्ठा ये कि फिर भी उन्हौने अपने अंदर रचनात्मकता और प्रतिभा को विकसित नही होने दिया । धन्य हैं, हमारे फिल्म वाले और उनकी सोच ।

भारतीय संस्कृति में क्या एसा नही हैं जो फिल्म वालों की उसपर नजर ही नही पड़ती हैं । हजारों एसे विषय हैं जो भारतीय संस्कृति में रचे बसे हैं । भारतीय संस्कृति अनुसार हमारे ऋषि, मुनि भारत की भूमि के विषय में तब से जानते थे जबकि पश्चिमी सभ्यता अभी विकसित भी नही हुई थी । तब जब केवल भारतवर्ष ही कर्म और धर्म के योग के लिये मुख्य भूमि था । तब जब अभी हिमालय पर्वत भी नही जन्मा था हमारे ऋषि मुनियों के पास तबसे भारतवर्ष की भूमि की विशेष जानकारी रही हैं । शायद ये बड़े अनुसंधान का विषय हैं और इसमें मेहनत कुछ ज्यादा करनी पड़ेगी जबकि प्रेम कहानी तो एसा उपवासी खाना हैं जो भूख लगने पर भारतीय दर्शक खाता ही हैं ।

भूगर्भ शास्त्री कहते हैं कि आज जंहा हिमालय हैं कभी वंहा टिथिस नामक समुन्द्र हुआ करता था । ये बताने का तात्पर्य केवल इतना हैं कि विज्ञान भी मानता हैं कि हिमालय पर्वत श्रंखला अधिक प्राचीन नही हैं । हमारे शास्त्र कहते हैं कि कभी जब हिमालय प्रकट नही हुआ था भारतवर्ष का नाम अजनाभ वर्ष हुआ करता था । फिर हिमालय के प्रकट होने की प्रक्रिया के दौरान से इसका नाम हिमनदंनवर्ष पड़ा और हिमालय ने जब प्रकट होकर एक सीमा रेखा को तय कर दिया तो इसका नाम भारतवर्ष पड़ गया ।

भारतवर्ष और आजके भारत में बहुत अंतर हैं । जिस भारतवर्ष की हम बात कर रहे हैं वो भारतवर्ष उस जमाने में पश्चिम की ओर अजरबैजान तक फैला था जिसे उस समय आर्यबीज कहा जाता था । कैस्पीयन सागर भी उसकी सीमा में था और उस समय इसी कैस्पीयन सागर को कश्यप सागर कहा जाता था । उत्तर दिशा में ये आजके साइबेरिया तक फैला था जिसे उस जमाने में शिविर कहा जाता था । आजभी रूसी लोग साइबेरिया को सिविर ही कहते हैं । पूर्व में ये चीन और मगोंलिया तक फैला था जिसे उस जमाने में भद्राश्व कहते थे । भद्राश्व अर्थात कल्याणकारी घोड़ा । भारतीय इतिहास में अगर आप जायेगें तो आपको पता चलेगा कि ये कल्याणकारी घोड़ा कैसे कालांतर में चीन बना । बहरहाल दक्षिण दिशा में हमारा भारत था जिसे उस जमाने में जंबू द्वीप के नाम से जाना जाता था । ये भारत का वो गौरवशाली इतिहास हैं जिसपर फिल्म वाले चाहें तो दसियों तरिके से हिट फिल्में बन सकती हैं परन्तु इससे बेहतर उनको विदेशी फिल्मों को हिन्दी में डब करके दिखला देना ज्यादा मुनासिब लगता हैं । ज्यादा से ज्यादा हुआ तो विदेशी फिल्म का रीमेक बना देना ज्यादा आसान काम हैं ।

विदेशी आकर्षण की ही बात हैं तो एक विदेशी लेखक डॉ एनफिल्ड ने अपनी किताब 'हिन्दू सुपिरिआरिटी' में लिखा हैं कि पाइथागोरस, अनाग्जरेकस, पाइरो जैसे विद्वानों ने ज्ञान के लिये भारत की यात्रा की थी । यही विद्वान बाद में ग्रीस के महान दार्शनिक कहलायें । 'अलेक्जेण्डर' अर्थात महान सिंकदर ने ईन्ही से आकर्षित होकर भारत की यात्रा की थी । बाद में उस समय के भारतीय जनपद अथवा एक राज्य के शासक 'आंभी' से गठजोड़ कर उसने आक्रान्ता का रुख अपना लिया था । 'रामायण' और 'महाभारत' की आज भी प्रासंगिक बातों को विषय नही बनाया जाता हैं । कर्मयोग को विस्तार से बताने वाली 'गीता' को ये लोग विषय नही बनाते हैं ।

बदले हुऐ समय की नब्ज भी हमारे फिल्म वाले नही पहचान पाते हैं । हालाकि भारतीय शास्त्र इसके लिये हजारों तरिकों से इसके संकेत देते हैं । 'ज्योतिष' को आज ईन्ही फिल्म वालो ने प्रचारित किया हैं परन्तु इसकी अवहेलना भी वे सदा से करते आये हैं । ज्योतिष के प्रति प्राचीन समय से ही मनुष्य

का रुझान रहा हैं और इसी के चलते आज ये एक बड़े व्यवसाय के रुप में परिवर्तित होता जा रहा हैं । इसका लाभ भी वे नही लेते हैं । जब ज्योतिषि कहते हैं कि बारह वर्षो में ऐक बार अपनी मूल त्रिकोण राशि, धनु में आकर गुरु संकेत करता हैं कि अब रचनात्मकता में बढ़ावा होना चाहिये तो यही फिल्म वाले घोड़े बेचकर सोये रहते हैं । ज्योतिषि कहते हैं, तीस वर्षो में एक बार अपनी राशि में आकर शनी 'कर्मयोग' की शिक्षा देता हैं । फिर भी ये फिल्म वाले अपनी भेड़चाल को बदलते ही नही हैं । भले ही अपनी भेड़चाल के अतंर्गत फिल्म वाले ज्योतिष को अंधविश्वास और धर्मांध मानते हो परन्तु इसके वैज्ञानिक पहलूओं का अनुसंधान कर वे इसकी सच्चाई तो उजागर कर सकते हैं । वे लोग इसे चुनौती क्यों नही मानते हैं ? इसे विषय बनाकर वे फिल्म क्यो नही बनाते हैं ? क्या विदेशी निर्माताओं ने 'नेस्ट्राडॉमस' पर फिल्म नही बनायी हैं ? ज्योतिष और ज्योतिषि तो इसके लिये तैयार हैं परन्तु दृढ़ईच्छा शक्ति और मेहनत का अभाव हमारे फिल्मवालों का बेड़ा गर्क किये हुऐ हैं ।

'बेन-हर', 'टेन कमांडमेंटस', 'पेशन्स ऑफ क्राईस्ट' और 'द डा विन्सी कोड' भी एसी फिल्में रही हैं जो पश्चिमी संस्कृति और उनकी दृढ़ ईच्छा शक्ति को दर्शाती हैं । जिससे उनके गूढ़ अनुसंधान और विश्लेषण का भी पता चलता हैं । हमारे फिल्मी लोग करते हैं, तो ये कि कैसे सस्ती लोकप्रियता हासिल की जाये ? कैसे लोगों के सामने दिखते रहा जाय । इसके लिये वे लोग आजकल छोटे पर्दे का रुख करने लगे हैं । वंहा बैठकर आपस में झगड़ते हैं और दिखाते हैं कि वे स्वच्छ मनोरंजन के हामी हैं । जबकि सब समझने लगे हैं कि संगीत के प्रोग्राम के दौरान जोर शोर से आपस में लड़ना और वाद विवाद उत्पन्न करना, रैंप पर किसी मॉडल की चोली गिरवा देना, नृत्य के दौरान किसी नृत्यांगना की चोली की डोरी का टूट जाना और उसका चोली पकड़कर नृत्य करते रहना इत्यादि सस्ती लोकप्रियता नही हैं, तो क्या हैं ?

ये फिल्मों की सस्ती लोकप्रियता हासिल करने के पुराने तरिके हैं जो वे लोग अब टी वी पर आजमाने लगे हैं । इससे कुछ समय की सस्ती लोकप्रियता भले ही मिल जाये परन्तु भारतीय सस्कृति का इससे भला नही होने वाला हैं । अगर समय रहते ये बॉलीवुड के निर्माता निर्देशक नही चेते तो आज नही तो कल हॉलीवुड के निर्माता निर्देशक ही भारतीय सस्कृति के सदाबहार विषयों पर फिल्में बनाना आरंभ कर देगें । फिर ये लोग उनमें काम करके अपने आपको गौरान्वित मेहसूस करेगें । इसी भेड़चाल की सौगात बॉलीवुड ने भारतीय दर्शको को दी हैं और इसी से वे स्वंय को प्रतिभाशाली और सफल फिल्मकार सिध्द करने में लगे हैं ।